तन्वी सेठ के प्रकरण के बहो इन मुद्दों पर भी चर्चा होना चाहिए

तन्वी सेठ प्रकरण के पीछे चाहे जो राजनीति, कूटनीति या विश्वनीति रही हो, भारतीय परिप्रेक्ष्य में उसका एक ज़रूरी सामाजिक संदर्भ भी है, जिसकी अनदेखी नहीं की जा सकती है।
यह है "इंटरफ़ेथ मैरिजेस" का मसला। भारत में हिंदुओं के शादी-ब्याह सम्बंधी मामलों के लिए "हिंदू मैरिज एक्ट 1955" है। और मुस्लिमों के शादी-ब्याह सम्बंधी मामलों के लिए "ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ" है।
दोनों के अलग-अलग नियम-क़ायदे हैं। तब "इंटरफ़ेथ" या "इंटरकास्ट" मैरिज की स्थिति में निर्मित होने वाली पेचीदगियों से बचने के लिए एक तीसरा क़ानून उपस्थित है, जिसका नाम है- "स्पेशल मैरिज एक्ट 1954"।
लेकिन यहां पर पेंच यह है कि अगर कोई हिंदू "इंटरफ़ेथ" विवाह भी करता है, तब भी "हिंदू मैरिज एक्ट" के तहत वह मान्य होगा। किंतु अगर कोई मुस्लिम धर्म से बाहर विवाह करता है तो "मुस्लिम पर्सनल लॉ" के हिसाब से यह निक़ाह अमान्य होगा।वैसी स्थिति में किसी मुस्लिम युवक के प्यार में डूबी हिंदू लड़की अगर उससे विवाह करना चाहती है और युवक अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहता तो युवती के लिए अपना धर्म या नाम बदलना अनिवार्य हो जाएगा, और स्पेशल मैरिज एक्ट का कोई औचित्य ही नहीं रह जाएगा।

देखा तो यही गया है कि हिंदू लड़कियां विधर्मी-विवाह के बाद नाम और धर्म बदलने को तत्पर रहती हैं। वैसा कोई दबाव मुस्लिम लड़के पर नहीं होता। कभी-कभी तो हरियाणा जैसे राज्य में कोई चंद्रमोहन भी चांद मोहम्मद बन जाता है। तन्वी सेठ को "तन्वी सेठ" के नाम से पासपोर्ट चाहिए था, क्योंकि जब आप भारत की सीमाओं को लांघकर अमेरिका जाते हैं तो हिंदू नाम आपके लिए अधिक सुविधाजनक सिद्ध होता है। चाहे तो हिंदू समुदाय के लोग इस तफ़सील से मुतमईन हो सकते हैं कि दुनिया में उनके नाम की अच्छी साख है। लेकिन यह फ़ौरी और फ़र्ज़ी खुशी फ़ौरन ख़त्म भी हो जानी चाहिए। अनस सिद्दीक़ी और तन्वी सेठ ने अपनी प्रेसवार्ता में बार-बार ज़ोर देकर यह कहा कि उन्होंने "इंटरफ़ेथ" मैरिज की है, लेकिन पासपोर्ट अधिकारी विकास मिश्र ने तन्वी पर दबाव बनाया कि वे अपना धर्म बदल लें।

तो क्या अनस और तन्वी इस बात को साबित करने के लिए प्रेसवार्ता कर रहे थे कि विकास मिश्र के दबाव के बावजूद वे दोनों अपना धर्म क़ायम रखेंगे और प्यार और विवाह के बावजूद धर्म नहीं बदलेंगे ? किंतु वस्तुस्थिति तो ऐसी है नहीं। क्योंकि तन्वी सेठ का ट्विटर अकाउंट "तन्वी अनस" नाम से संचालित होता है और निक़ाहनामे में उनका नाम "शादिया सिद्दीक़ी" बताया गया है। कुछ दूसरे दस्तावेज़ों में भी नाम में बदलाव पाया गया है।

"क्या आपने कभी अपना नाम बदला है ?" प्रपत्र में इस प्रश्न पर तन्वी ने "नहीं" पर टिक किया, जो कि सरासर झूठ है। "क्या यही आपका वास्तविक नाम है ?" प्रश्न में उन्होंने "हां" पर टिक किया, जो केवल तभी सही हो सकता है, जब पहली वाली बात भी सही हो। भ्रम की स्थिति में सतर्कता का परिचय देना

पासपोर्ट कार्यालय का दायित्व है या नहीं है, अब प्रश्न यह भी पूछा जाना चाहिए।

प्रश्न तो ख़ैर यह भी है कि तन्वी ही "तन्वी अनस" और "शादिया सिद्दीक़ी" क्यों बनी, अनस सिद्दीक़ी "अनस सेठ" या "अनिल सक्तावत" क्यों नहीं बन गया? क्या तन्वी ही अनस को प्रेम करती थी, अनस तन्वी को प्रेम नहीं करता था? क्या प्यार में बराबरी नहीं थी? क्या प्यार में लड़की लड़के की तुलना में हीन थी, कमतर थी, छोटी थी, गई-बीती थी, गिरी-पड़ी थी, इसलिए लड़की ने नाम बदला, धर्म बदला, लड़के ने ऐसा नहीं किया, यह प्रश्न अब मैं नारीवादियों की ओर प्रेषित कर रहा हूं- सौजन्य की तरह नहीं, चुनौती की तरह।

ज़रूरी सवाल यह भी है कि करीना कपूर विवाह के बाद "करीना कपूर ख़ान" क्यों बनीं, सैफ़ अली ख़ां विवाह के बाद "सैफ़ अली कपूर" क्यों नहीं बने? और उनके बच्चे का नाम "तैमूर ख़ां" के बजाय "तिमिर कपूर" क्यों नहीं हुआ? "इंटरफ़ेथ" मैरिज से उपजी संतान का धर्म क्या हो, भारत देश का महान संविधान इस प्रश्न पर मौन क्यों है?

अगर पुरुष का धर्म ही संतान का धर्म होगा, तो यह कौन-सी पितृसत्ता इस देश में रची जा रही है, यह प्रश्न भी नारीवादियों के लिए प्रेषित है, क्योंकि मैंने पाया कि उनमें स्वयं यह प्रश्न पूछने की या तो बौद्धिक क्षमता नहीं थी, या नैतिक साहस नहीं था। अगर प्यार धर्म और जाति से परे है तो हिंदू ही अपना धर्म और नाम क्यों बदले, मुस्लिम क्यों नहीं बदल सकते, यह सवाल अब मैं इंटरफ़ेथ मैरिजेस के हिमायती उदारवादियों की तरफ़ ठेलना चाहूंगा।
"लव जिहाद" जैसे मूल्याविष्ट और आक्रामक शब्दों का उपयोग मैं नहीं करता। "इंटरफ़ैथ" मैरिज से भी मुझे हर्ज़ नहीं है, किंतु प्यार को अपनी वैधता की परीक्षा तो देना ही होती है।

विधर्मी युवक के प्रेम में पड़ी सभी हिंदू लड़कियों का यह अधिकार है कि अपने प्रेमी का इम्तिहान लेकर देखें। अगर वो धर्म बदलने को तैयार है तो प्यार सच्चा है। अगर नहीं तो समझिए कि प्यार धर्म से हार गया है। या कौन जाने, प्यार है भी या नहीं?

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि आज इक्कीसवीं सदी में भी लड़की को विवाह के बाद अपने पति का उपनाम अपने नाम में जोड़ना पड़ता है और विधर्मी-विवाह की स्थिति में तो पति का धर्म भी अपनाना पड़ता है। क्या स्त्री को इस बंधन से स्वतंत्र होने का अधिकार नहीं है? यह मैं "पर उपदेश कुशल बहुतेरे" की तर्ज़ पर नहीं बोल रहा हूं, निजी जीवन में इस आदर्श का पालन करने के बाद बोल रहा हूं। मैं निजी रूप से तन्वी सेठ के मसले को धर्म या राजनीति या कूटनीति नहीं, बल्कि स्त्री की अस्मिता के दृष्टिकोण से देखता हूं।

और इसीलिए मेरी यह पोस्ट सीधे-सीधे स्त्रियों को ही सम्बोधित है- आप ही क्यों अपना नाम, धर्म और पहचान बदलें, पुरुष क्यों नहीं बदलें? वैसे बेहतर तो यही होगा कि दोनों में से कोई भी नहीं बदले, क्योंकि अपना निजी अस्तित्व क़ायम रखकर ही सही अर्थों में प्रेम किया जा सकता है। यहां केंद्र सरकार के विदेश राज्यमंत्री एम.जे.अकबर का उदाहरण देना ज़रूरी है। उन्होंने मल्लिका जोसेफ़ से विवाह किया है। मल्लिका कभी-कभी अपना नाम मल्लिका जोसेफ़ अकबर भी लिखती हैं। लेकिन उनके बच्चों के नाम मुकुलिका और प्रयाग हैं। ऐसे और भी उदाहरण खोजने पर मिल सकते हैं। साहेबान, "गंगा-

जमुनी” मिलने-जुलने का नाम है। “प्यार” भी मिलने-जुलने से ही होता है।

“हम तो नहीं बदलेंगे, हम तो जैसे ही वैसे ही रहेंगे”, वैसी ठस ज़िद करने से लव नहीं जिहाद ही होता है। आधुनिक, सजग, विवेकशील भारत को इन दोनों में से क्या चुनना है, यह निर्णय अब उसे स्वयं ही करना होगा।
अस्तु।